- डंकेल प्रस्ताव -

आर्थिक गुलामी की ओर बढ़ते कदम

- दत्तोपंत ठेंगड़ी

प्रकाशकीय निवेदन

डंकेल प्रस्तावों के खतरों से देश के किसानों को अवगत कराने तथा उसके विरोध में जनमत जागृत करने के उद्देश्य से विगत ११ नवम्बर से ६ दिसम्बर १९९३ तक **भारतीय किसान संघ और स्वदेशी जागरण मंच ने विदर्भ के आमगांव से खामगांव तक किसान दिंडी** का आयोजन किया था। यह दिंडी जब नागपुर पहुंची तो दि. २७ नवम्बर को नागपुर के चिटणीस पार्क में एक विशाल जनसभा का आयोजन किया गया। इस सभा को देश के महान विचारक, विख्यात श्रमिक नेता और भारतीय किसान संघ के संस्थापक माननीय श्री दत्तोपंतजी ठेंगडी ने संबोधित किया। उनका पूरा भाषण ही संपादित रूप में इस पुस्तिका में प्रस्तुत है।

- प्रकाशक

आर्थिक गुलामी की ओर बढ़ते कदम

अपने यहाँ जो पद्धति है कि किसी भी सभा का प्रारंभ करते समय नेताओं को हार पहिनाना- मालाएँ पहिनाना, उस पद्धति के अनुसार यहाँ भी हुआ है। इसमें कठिनाई थी कि भारतीय किसान संघ में कोई भी एक नेता नहीं है, यहाँ सामूहिक नेतृत्व है। इसलिये हमारे यहाँ नारा भी है कि 'हर किसान हमारा नेता है।' एक, दो, पांच-पंचास नेताओं के भरोसे करोड़ों का किसान समाज अपना भविष्य ठीक नहीं कर सकता। क्योंकि नेता भी आखिर मनुष्य है, कभी फिसल सकता है, कभी विश्वामित्र हो सकता है, कभी बीमार हो सकता है, कभी 'रामनामसत्य' हो सकता है। तो, एक, दो, पांच-पचास नेताओं के भरोसे नहीं तो देश का हर किसान जागृत रहे, अखंड जागृत रहे, अपनी समस्याओं की दृष्टि से वह प्रशिक्षित हो और ऐसे प्रशिक्षित किसान हर स्तर पर, ग्राम से लेकर राष्ट्रीय स्तर पर बार बार एकत्रित आकर विचार विमर्श करें ओर स्वयं अपना नेतृत्व करें यही अपनी कल्पना है। इसलिये यहाँ कोई नेता नाम की कोई श्रेणी नहीं है, हर किसान हमारा नेता है। तो भी, मंच पर बैठे हैं, इसलिये ये माना गया कि ये हमारे नेता ही होंगे और नेताओ को हार पहिनाना चाहिये, इस दृष्टि से हम लोगों को हार पहनाये गये। हार लेते समय मन में बड़ी आशंका थी। आज देश जिस चौराहे पर खड़ा है, उसे देखते हुए मन में आशंका उठती है कि कहीं ऐसा न हो जाये कि नेताओं को हार मिले और जनता हार जाए, देश डूब जाये। कहीं ऐसी परिस्थिति न आ जाए, क्योंकि ऐसे ही कगार पर आज देश खड़ा है।

आज की जो परिस्थिति है, उसमें कई समस्यायें आपके मन में है, यह मैं भी जानता हूँ क्योंकि सबके साथ व्यक्तिगत बातचीत होती है इस कारण एक ही विषय लेकर एक सुसूत्र भाषण करना उपयुक्त नहीं रहेगा, ऐसा मैं समझता हूँ। आप सब लोगों के मन में जो विविध प्रश्न हैं अलग अलग ढंग के प्रश्न हैं, सभी समस्याओं का थोड़ा समाचार लेना, यही अधिक उपयुक्त रहेगा और इस नाते कुछ बातें, अलग अलग बिन्दु मैं आपके सामने रखने का प्रयास करता हूँ।

सरकार की गलत नीति

पहली बात यह है कि किसान आंदोलन के बारे में १९४७ से ही सरकार के द्वारा कुछ गलत-फहमी फैलाने का सुनियोजित प्रयत्न होता रहा है। किसानों की मांग है कि हमें लाभकारी मूल्य मिलना चाहिये याने उत्पादन खर्चा और उस पर कुछ लाभांश मिले। लोगों का ख्याल है कि ये हो ही नहीं सकता इसलिये सरकार यह नहीं दे रही है। किन्तु यह सच नहीं है। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के 'प्रियेंम्बल' में स्पष्ट रूप से लिखा गया है किसानों को लाभकारी मूल्य नहीं देना चाहिये, क्योंकि किसानों को लाभकारी मूल्य देने से देश का आर्थिक ढांचा चरमरा जायेगा। वास्तव में सरकार का यह चिन्तन ही गलत है। सत्य यही है कि पूंजीवाद का आर्थिक ढांचा चरमरा जायेगा, लेकिन कहा गया कि देश का आर्थिक ढांचा चरमरा जायेगा तो किसानों को उनका मूल्य न देना यह सरकारी नीति है और इसलिये यह सोचना कि सरकार को हम ज्यादा समझाये तो वह समझ जायेगी, ऐसी बात नहीं है।

भारतीय किसान संघ किसानों के लिये लाभकारी मूल्य की बात करता है। सरकार ने वही नीति चलायी है, जो अंग्रेज सरकार के जमाने में थी, 'फूट डालो और राज करो।' इसलिये किसानों के खिलाफ शहर के उपभोक्ताओं, ग्राहकों को भड़काया जाता है कि किसानों की मांगे पूरी हो जायेंगी तो आपके ऊपर कीमतों का बोझ बढ़ जायेगा। किसान तुम्हारा दुश्मन है। उधर खेतिहर मजदूर को बताया जाता है कि किसान तुम्हारा दुश्मन है, तुमको पूरा पैसा नहीं दे रहा, पूरी रोजी नहीं दे रहा है।

भारतीय किसान संघ एक जिम्मेदार राष्ट्रवादी संगठन है। 'हमारी मांगे पूरी हो। चाहे जो मजबूरी हो' ऐसी गैर जिम्मेदारी की बात भारतीय किसान संघ नहीं करता। जब भारतीय किसान संघ ने यह मांग रखी तो हमने यह भी कहा कि यह मांग कैसे पूरी हो सकती है, इसका व्यावहारिक मार्गदर्शन करने की जिम्मेदारी हमारी है। हमने सरकार के सामने अपनी बात रखी और कहा कि यह हो सकता है। हमारे यहाँ जब योजनाएं शुरू हुई और जब इसमें महालनोबिस साहब का प्रवेश हो गया तो उसके बाद भारत की योजनाएं रूस का अनुकरण करने वाली योजनाएं रहीं। हमारी योजनाओं में प्राथमिकता का क्रम (Order of Priority) रूस के समान रहा। उन्होने अंतरिक्ष

विज्ञान और प्रतिरक्षा जो कि हर देश की प्राथमिकता रहेगी, के बाद बड़े उद्योगों को प्राथमिकता दी और कृषि तथा ग्रामीण विकास को सबसे अंत में रखा। इसका परिणाम रूस वालों को भुगतना पड़ा है। हर साल उनकी कृषि फेल होती थी और कम्युनिस्ट रूस को कॅपिटलिस्ट (पूंजीवादी देश) अमेरिका से अनाज मंगवाना पड़ता था। तो, उस रूस का हमने अनुकरण किया। हम लोगों ने कहा कि आप रूस का अनुकरण करते हुए बड़े उद्योग और उद्योगपतियों को जो प्रश्रय दे रहे हैं, योजना में बड़ी धनराशि उसके लिये आबंटित की जाती है, यह प्राथमिकता का क्रम बदलकर वह पैसा और प्रश्रय कृषि तथा ग्रामीण विकास को देना चाहिये। हमें अपने कृषिप्रधान देश में कृषि और ग्रामीण विकास को ही अग्रक्रम देना चाहिये। अगर ऐसा किया गया तो देश का चित्र बदल जायेगा। आपको आश्चर्य होगा यह जानकर कि इस देश के छोटे से छोटे किसान को बिजली का जो रेट देना पड़ता है, उससे कम रेट में बिड़ला साहब को बिजली मिलती है। अब इससे अधिक और क्या अन्याय हो सकता है, इसका छोटा सा उदाहरण यह है।

योजना में अग्रक्रम बदलो

हम लोगों ने कहा कि योजना में अग्रक्रम बदल दीजिये। धन का जो आबंटन (Allocation) बड़े उद्योग और उद्योगपतियों के लिये है वह कृषि और ग्रामीण विकास के लिये रखिये। फिर हम लोगों ने कहा कि Heavy Subsidy खेती में प्रयुक्त होने वाली बिजली, खाद, औषधि, बीज और खेती के औजार आदि सभी चीजों के लिये दीजिये। इस चीजों पर आप यदि उन्हे Heavy Subsidy देंगे तो उनका लागत मूल्य, उत्पादन का खर्चा (Cost of Production) घट जायेगा। उत्पादन खर्चा घट जायेगा तो फिर शहर के उपभोक्ताओं से ग्राहकों से, उनके ऊपर ज्यादा बोझ न बढाते हुए अपनी पूरी कीमत वसूल करना किसानों के लिये संभव हो सकेगा। इससे ग्राहक उपभोक्ता और किसान के बीच जानबूझकर पैदा किया गया संघर्ष भी अपने आप मिट जायेगा। वास्तव में यह संघर्ष और भेद सरकार की गलत नीति के कारण ही पैदा हुआ है। यदि अग्रक्रम बदलता है, बड़ी Subsidy अगर खेती में प्रयुक्त होने वाली चीजों को उनके मूल में दी जाती है, तो उत्पादन खर्चा घट जाता है, इसलिये कीमत भी घट जायेंगी,

उपभोक्ताओं का नुकसान न करते हुए किसानों को पूरी कीमत मिल सकती है और किसान को अगर पूरी कीमत मिल जायेगी तो वह अपने खेतिहर मजदूरों को भी पूरी रोजी दे सकेगा। यह कहना ठीक नहीं है कि मामूली खेतिहर मजदूर किसान को अपना दुश्मन समझता है। हाँ, यह सच है कि आज किसान उसे पूरी रोजी नहीं दे पा रहा है किन्तु इसका कारण यह नहीं है कि वह उसे अपना दुश्मन मानता है या उसे भूखा मारना चाहता है लेकिन जब उसको ही पूरा पैसा नहीं मिल रहा, वह सोचता है कि इससे तो वह अपने बाल-बच्चों का पेट ही पूरी तरह से नहीं पाल सकता तब इन मजदूरों को पूरी रोजी कहाँ से दूं? इसलिये वह नहीं दे पा रहा। माने, देने की इच्छा तो है, पर हैसियत नहीं है। यदि उसको अपने माल की पूरी कीमत मिल जायेगी तो आम किसान अपने खेतिहर मजदूर को बड़ी खुशी से पूरा पैसा देने के लिये तैयार होगा। हां, केवल ४ - ५ प्रतिशत अतिस्वार्थी लोग जो हर समाज में होते है, मजदूरों को पूरी रोजी नहीं देंगे। किन्तु आम किसान इस प्रवृत्ति का नहीं है। खेतिहर मजदूरों को पूरी रोजी मिलने से किसानों के प्रति विरोध और संघर्ष की स्थिति भी अपने आप समाप्त हो जायेगी। इसलिये हम लोगों ने सरकार को आह्वान किया कि छह साल तक यह व्यवस्था कीजिये, छह साल के अंदर चित्र बदल जायेगा। लेकिन सरकार की हिम्मत नहीं है, और उसके कई कारण है। तो जहाँ हम मांग रखते हैं, तो वह कैसे पूरी हो सकती है, उसके लिये व्यावहारिक उपाय, इलाज भी हम सुझाते हैं। इसका एक उदाहरण केवल आपके सामने रखा है।

स्वदेशी का सही अर्थ

दूसरी बात है, स्वदेशी की। इसके बारे में भी तरह तरह की गलत फहमियां जानबूझकर पहले से फैलायी गयी है। यह बताया जाता है कि ये स्वदेशी वाले बड़े दकियानूसी हैं, संकुचित, संकीर्ण मनोभाव रखते हैं। केवल अपने राष्ट्र का ही विचार करते हैं। अरे, आज तो दुनिया का विचार करना चाहिये, Globalisation का विचार करना चाहिये। कैसी विचित्र बात है, हम लोगों को आप Globalisation सिखा रहे हो? यहाँ तो, हमारे हिन्दुराष्ट्र के प्रारंभ से ही हमारे यहाँ Globalisation की संकल्पना है। जब कहा गया, 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' (आर्य याने सुशिक्षित-सुसंस्कारित) तो वह सम्पूर्ण विश्व का

विचार था। जब कहा गया, ‘वसुधैव कुटुम्बकम्’ तो वह भी पूर्ण विश्व का ही विचार था। और, आप जैसे तंग नजरिया रखने वाले पापी लोग हमको सिखा रहे हो कि दृष्टिकोण बड़ा उदार और विशाल होना चाहिये। यह हमें सिखाने का आपको क्या नैतिक अधिकार (Moral right) है? हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि स्वदेशी का मतलब हम राष्ट्र तक संकुचित हैं, ऐसा नहीं है। परम पूजनीय गुरुजी ने कई बार यह कहा कि विश्वशांति के लिये एक विश्वसंकल्पना की आवश्यकता है। एक विश्वसंकल्पना का अर्थ एक विश्व सरकार, एक विश्व-शासन नहीं बल्कि हरेक राष्ट्र अपना अपना कारोबार ठीक ढ़ंग से चलाये। हरेक राष्ट्र की अपनी अपनी संस्कृति है उस संस्कृति के अनुसार हरेक राष्ट्र अपनी अपनी प्रगति का मॉडल, नमूना बनाये। हरेक राष्ट्र ज्यादा से ज्यादा स्वयंपूर्ण -स्वावलम्बी होने का प्रयास करे और ऐसे जो स्वायत्त, स्वयंशासित, स्वावलंबी, स्वयंपूर्ण जो विभिन्न देश हैं, वे समानता की भूमिका पर (On equal footing) एक दूसरे के साथ सहयोग करें। यह समझकर कि सारी मानवता एक परिवार है, उस परिवार के विभिन्न सदस्य याने ये अलग-अलग देश हैं। इस भावना के साथ एक दूसरे के साथ स्नेहपूर्ण सहयोग का व्यवहार करें और हरेक देश अपनी अपनी संस्कृति के अनुसार अपने अपने स्वदेशी का पुरस्कार करे। स्वदेशी हरेक देश ने अपनानी चाहिये, यही है स्वदेशी का मतलब। केवल अपने देश को बाकी देशों से अलग रखने के लिये स्वदेशी नहीं है। तो, ये जो तंग नजरिया वाला आरोप है, बिलकुल गलत है। हम जानते हैं कि निहित स्वार्थी तत्वों द्वारा जानबूझकर गलत आरोप लगाया किया जाता है।

विदेशी पूंजी के लम्बे हाथ.....

विदेशी पूंजी के हाथ बहुत लम्बे हैं। बहुत पहले से सोचा गया, दूसरे महायुद्ध के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय दबाव के कारण जब अपने अपने उपनिवेशों को स्वराज्य देना बाध्य हो गया, तब गोरे साम्राज्यवादी देशों को पहली बार इस बात का अहसास हुआ कि उनकी अर्थव्यवस्था अपने पैरों पर खड़ी नहीं थी। दिखता था कि ये बड़े सम्पन्न हैं, समृद्ध हैं, किन्तु उनकी यह सम्पन्नता और समृद्धि उपनिवेशों के शोषण के सहारे ही थी। अपने खुद के पैरों पर उनकी समृद्धि नहीं थी। इसके कारण बाकी देशों का शोषण कैसे करना, इसका विचार उन्हे करना पड़ा। इसलिये दूसरे महायुद्ध के प्रारंभ से ही नव

स्वतंत्र देशों को, जिनको विकसनशील देश कहा जाता है, जिनको दक्षिणी देश कहा जाता है, ऐसे देशों को हम फिर किस तरह आर्थिक गुलामी में डाल सकते हैं, किस तरह उनका शोषण कर सकते हैं, इसका विचार शुरू हुआ और सोचा गया कि राजनीतिक दृष्टि से तो ये लोग स्वतंत्र हैं लेकिन आर्थिक दृष्टि से उनको गुलाम बनाना है तो ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि तृतीय विश्व के सभी नव स्वतंत्र देशों में ऐसे ही लोगों को राज्यकर्ता के नाते लाया जाए जो गोरे साम्राज्यवादी देशों के लिये अनुकूल रहेंगे और जो राजसत्ता में आने के पश्चात अपनी जनता के साथ धोखा करते हुए, गद्दारी करते हुए गोरे साम्राज्यवादी देशों को अपनी जनता का शोषण करने की खुली इजाजत देंगे। ऐसे ही लोगों को नवस्वतंत्र देशों के शासन में लाने का प्रयास शुरू हुआ। हर जगह उन्होने प्रयास किया, उसका लम्बा इतिहास देने की यहाँ आवश्यकता नहीं है। जहाँ उनके लिये अनुकूल ऐसे शासक नहीं थे, वहाँ जबर्दस्ती से क्रान्ति की स्थितियां पैदा कर क्रान्ति के माध्यम से वहाँ की सरकारो को हिला दिया गया और अपने लिये अनुकूल नये लोगों को सरकार में लाया गया। यह केवल भारत का ही सवाल नहीं है। सारे तृतीय विश्व के देशों के लिये यह चल रहा है कि अपने अपने देशों की जनता के साथ गद्दारी करने के लिये और सफेद साम्राज्यवादी देशों को अपनी जनता का शोषण करने के लिये जो खुली इजाजत देंगे, ऐसे ही लोगों को सरकार में लाना, यह गोरखधंधा शुरू हुआ। उसी के हम भी शिकार हैं और बहुत सारे नवस्वतंत्र देश भी इसकी चपेट में आ चुके है।

आर्थिक गुलामी का जाल

यह तो १९४५ के बाद ही शुरू हो गया था। हमारे देश में १९४७ के बाद शुरू हुआ और प्रारंभ से ही यह आर्थिक गुलामी का जाल फैलाने का काम शुरू हुआ। मैं बहुत पुराना इतिहास नहीं दोहराना चाहता, पी. एल. ४८० का, जब आवश्यकता नहीं थी तब यहाँ अमरीका का लाल गेहूँ क्यों लाया गया? यह बात छोड़िये। लेकिन मुझे स्मरण आता है कि १९६५ में, जिस समय 'इंडो-पाक' कैनाल ट्रीटी हुई, वह पाकिस्तान के लिये अनुकूल और हिन्दुस्तान के लिये प्रतिकूल है, यह जानते हुए भी भारत सरकार ने उस पर हस्ताक्षर किये, उस समय परम पूजनीय श्री गुरुजी ने यह वक्तव्य निकाला था कि जागतिक बैंक के दबाव में आकर, समझबूझकर आपने इस पर हस्ताक्षर किये हैं।

विदेशी पूंजी के दबाव में आकर यदि इस तरह से झुकने की आदत आपको लगती है, तो अपने देश में आर्थिक गुलामी आने में देर नहीं लगेगी, १९६५ में पूजनीय गुरुजी ने यह इशारा किया था, यह चेतावनी दी थी। आगे चलकर तीन माध्यमों से यहाँ आर्थिक गुलामी लाने का प्रयास चला। ये तीन माध्यम थे, आन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष, जागतिक बैंक और बहुराष्ट्रीय कम्पनियां। यह संघसृष्टि के लिये अभिमान की बात है, लेकिन आनंद की बात नहीं है कि विदेश की आर्थिक गुलामी यहाँ आ रही है। इसकी सर्वप्रथम सावधानी का इशारा, संघसृष्टि का ही एक अंग भारतीय मजदूर संघ ने १९८२ में दिया। जब यह विषय किसी के दिमाग में नहीं था, उस समय भारतीय मजदूर संघ ने यह चेतावनी दी कि यहाँ विदेशी आर्थिक साम्राज्य आ रहा है। तीनों माध्यम कई दशकों से काम कर रहे थे। यहाँ भी धीरे-धीरे आर्थिक साम्राज्यवाद के पॉकिट्स, Foreign Collaboration के जरिये आ रहे थे। हम लोग चेतावनी देते थे। लेकिन कोई सुनने की मन:स्थिति में नहीं था। लेकिन पिछले ३- ४ सालो में यह मामला यहाँ और दुनिया में बहुत जोरों से उछलकर सामने आया है। क्या कारण है समझने की आवश्यकता है।

आत्मसर्पण क्यों?

ऐसा है कि आर्थिक शोषण तो सभी देशों का चल रहा था। अब इसमें कई लोग ऐसा मानते हैं, कि भाई अगर विदेशी पूंजी का विनियोजन, Foreign Investment नहीं होगा तो हम नव-स्वतंत्र देश है, हमारा विकास कैसे हो सकता है? जब हम विदेशी पूंजी के विनियोजन का विरोध करने लगे तो लोगों ने कहा इनको अर्थशास्त्र वगैरे का कोई ज्ञान नहीं है, प्रगत देशो में भी Foreign Investment होती है और ये लोग अपने देश में विदेशी पूंजी का विनियोजन नही चाहते, ये तो देश को दो-तीन शताब्दियां पीछे धकेलना चाहते है। यह बात सही नहीं है। हमने कहा विदेशों में प्रगत देशों में Foreign Investment किस तरह से होती है यह हमें बताईये। हम जानते है कि प्रगत देशो में भी Foreign Investment होती है किन्तु It is on the terms of host country, जिस देश में पूंजी लगायी जा रही है उस देश की सुविधा के अनुसार होती है। हाँ, यह हो सकता है कि वहाँ समानता के आधार पर Negotiation होते है, और कुछ लेन-देन चलती है, लेकिन जिस देश में पूञ्जी लगायी जा रही है, वहाँ के राष्ट्रीय हित को प्राथमिकता देकर, उस तरह के समझौते होते है। यहाँ ऐसी कोई बात नहीं है, यहाँ तो

आत्मसमर्पण है। किसी ने कहा कि आत्मसमर्पण नही करेंगे तो वह पैसा नहीं देंगे। अरे, हम पूछना चाहते हैं कि वे पैसा दे रहे हैं तो क्या हम पर उपकार कर रहे है ? यहाँ पैसा लगाना उनके हित की बात हैं इसलिये वे पैसा लगा रहे है। और Negotiation के लिये जाने वाले हमारे मिनिस्टर और सेक्रेटरी यदि कड़ा रूख, Strict Attitude अपनाते है तो बराबर यशस्वी हो सकते है।

कोरिया का साहस

इस सन्दर्भ में एक छोटा सा उदाहरण दूंगा। हम जानते है कि कोरिया एक छोटा देश है। जैसे बाकी देशो पर वैसे कोरिया पर भी अमरीका ने दबाव डाला कि हम आपके देश में पैसा लगाना चाहते है। कोरिया ने पूछा, लेकिन कहाँ ? तो उन्होने कहा कृषि में लगाना चाहते है। तो उस समय कोरिया के सायन्स टेक्नोलोजी एण्ड ह्यूमन डेह्वलपमेंट अफेयर्स के वार्न हा नामक मंत्री ने, जो देश-भक्त तो थे ही, बुद्धिमान भी थे, चर्चा के लिये आये अमरीकी लोगों से कहा कि हमारे देश में आपकी पूंजी का हम स्वागत करेंगे, पर हमारी शर्तो पर। हमारी कृषि में अमरीका को हम पैर नहीं रखने देंगे लेकिन हां, हमें आवश्यकता है आपके इन्वेस्टमेंट की, जहाज बनाने के कारखाने के लिये, ऊर्जा के लिये आवश्यकता है, वहाँ पैसा डालिये। अमरीका ने कहा, नहीं हम हमारी शर्तों पर आयेंगे, कृषि में प्रवेश करेंगे, वर्ना हम पैसा नहीं देंगे। वार्न हा ने कहा, नहीं तो आप अपना पैसा ले जाईये, हमें नहीं चाहिये आपका पैसा। कोरिया को एक स्टील इंडस्ट्री खड़ी करनी थी। पोहांग स्टील इंडस्ट्री उसका नाम है। उन्होंने कहा कि हम अपने ढंग से इसको खड़ी करेंगे। विदेशी कम्पनी ने दबाव डाला कि नहीं, यह हमारी शर्तो पर खड़ी करनी होगी। कोरिया ने दृढता से कहा, आपका पैसा उठा लीजिये। हम अपने लोगों से पैसा खड़ा करके इंडस्ट्री खड़ी करेंगे। आज वही सुप्रसिद्ध पोहांग इंडस्ट्री स्वाबलम्बन के आधार पर कोरिया में काम कर रही है। कोरिया जैसे छोटे से देश के सामने अमेरिका को झुकना पड़ा, कृषि के क्षेत्र में जाने का आग्रह छोड़ना पड़ा। कोरिया की शर्तों पर, वो कहते थे उस क्षेत्र में पूंजी लगाने के लिये अमरीका को बाध्य होना पड़ा। कोरिया जैसा छोटा देश यदि ऐसा कड़ा रुख अपनाकर अपने राष्ट्रहित की चिंता कर सकता है तो हमारा बड़ा देश ऐसा रुख क्यों नहीं अपना सकता? यह बात नहीं कि हम ऐसा रुख

नहीं अपना सकते। लेकिन यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि हमारे राज्यकर्ता बेचे गये हैं। यह बहुत अपमानजनक ऐसी बात मैं कह रहा हूँ, defamatory, For which I can be proceeded against, defamatory statement है कि राज्यकर्ता खरीदे गये हैं और इसके कारण देश के साथ धोखा करते हुए देश को बेचने का काम चला, Foreign Collaboration Agreements हुए।

यह चल ही रहा था, इतने में एक नया बखेड़ा खड़ा हुआ। जिसका नाम हैं, डंकेल। यह डंकेल क्या है, दो मिनट में उसका इतिहास बताना भी आवश्यक हैं। दूसरा महायुद्ध समाप्त हो जाने के पश्चात, जैसा मैंने कहा कि सफेद साम्राज्यवादी देश, बाकी सब देशों का शोषण करने की योजनाएं बना रहे थे। इसी इरादे से उन्होने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये एक योजना बनाई, उसे संस्था कहा जाए, संगठन कहा जाये या आंदोलन कहा जाये, उन्होने भी अभी निश्चित नहीं किया है कि इसे क्या कहा जाए, लेकिन 'जनरल एग्रीमेंट ऑन टैरिफ एण्ड ट्रेड (General Agreement on tariffs and trade) नामक एक व्यवस्था उन्होने शुरू की, किसलिये शुरू की, तो कहा गया अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये यह व्यवस्था शुरू की गई है।

अन्तर्राष्ट्रीय-व्यापार और भारत

हम सब हमारे प्रगतिशील लोगों से बात करते हैं तो वे कहते हैं, "अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार एक नया phenomena है। एक नई प्रक्रिया है। इस बारे में, अपने यहाँ कुछ नहीं था।" ऐसी बात नही है। जैसा अभी हमारे बोकरेजी ने कहा कि अर्थशास्त्र में जितने भी प्रकार और श्रेणियां हैं, जितनी Categories हैं, वह सारी Categories भले ही वह प्राथमिक स्वरूप में हो, उसका दर्शन हमें अपने वेदों में होता है। लाभ हो, वेतन हो, मजदूरी हो, ब्याज हो, बाजार हो सभी बातों का उल्लेख, प्राथमिक स्वरूप में क्यों न हो हमें वहाँ मिलता है। बाद में, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के बारे में महाभारत के शांतिपर्व में विस्तृत उल्लेख है, विदुर नीति में भी इसका विस्तृत विवरण है, और इसके कारण हमारे यहाँ के जो राज्यकर्ता थे, वे इस पर चलते भी थे। छत्रपति शिवाजी के समय यहाँ अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार चलता था, चारदेशों के, पोर्तुगीज, डच, फ्रैन्च और इग्लिश व्यापारी यहाँ आकर व्यापार करते थे। इनमें से पोर्तुगीज व्यापारियों ने अपने मेट्रोपोलेटन में भेजे पत्र यहाँ प्रकाशित हुए हैं। ये व्यापारी कहते है कि हिन्दुस्तान के सभी राज्यकर्ता बड़े

समझदार है। उनसे हमें कोई तकलीफ नहीं है, वो हमारी और अपने प्रजाजनों की सीधे मुलाकात होने देते है। हम हमारा माल उनको बेचते है, सौदा हो गया तो वो हमें पैसा देते हैं, हम माल देते हैं, पैसा लेते हैं, सीधा मामला चलता है। लेकिन एक राज्यकर्ता बड़ा बदमाश है, जिसका नाम है शिवाजी, वह अपने प्रजाजनों के साथ हमारी मुलाकात ही नहीं होने देता। वह कहता है, मेरे साथ बात करो। अपने प्रजाजनों की कौनसी आवश्यकता है, जो हमारे द्वारा पूरी हो सकती है, इसका पूरा अंदाज वह लेता है। वह स्वयं हमारे साथ बात करता है, Hard nut to crack, उसके साथ Bargain करना भी कठिन है, लेकिन Bargain हो जाता है, सौदा होता है, हमारा इतना माल हम देंगे, इतनी कीमत आप हमें देंगे, सौदा तय हो जाने के बाद भी वह रुकता नहीं है, वह कहता है कि अपना माल रखो और अपनी कीमत ले जाओ, लेकिन पैसों में नहीं, हम पैसे नहीं देंगे, उतने कीमत की हमारी सुपारी और नारियल आपको खरीदना पड़ेगा, नहीं खरीदते तो यह सौदा नहीं होगा। खैर, मेरे कहने का तात्पर्य यही है कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार हमारे लिये कोई नयी चीज नहीं है। शायद, जो अंग्रेजी पढे-लिखे होने के कारण स्वदेश के बारे में घोर अज्ञान रखते हैं, 'इंग्लिश एजुकेटेड' लोगों के लिये नई बात हो सकती है। लेकिन हमारे यहाँ इसका शास्त्र विकसित था।

'गेट' की आड़ में.....

लेकिन अभी जो शास्त्र आया है वह क्या है? GATT जो है इसका काम १ जनवरी १९४८ को शुरु हुआ और उसके वार्ता के दौर Round of Negotiation चले। उसमें एक ही आयटेम अजेन्डा पर था कि माल का व्यापार 'International Trade in goods' याने वस्तुओं का व्यापार। यह एक ही चीज अजेन्डा में थी। उसमें भी गैर गौरे देशों पर, तृतीय विश्व के देशों पर अन्याय होता था। १९७२ में, तृतीय विश्व के कुछ देशों ने एकत्रित आकर गौरे साम्राज्यवादी देशों के लोगों से प्रार्थना की, कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के नियम जो आप 'गेट' द्वारा बनवा रहे हैं, इसमें हमारे साथ अन्याय होता है, असमानता के आधार पर सारी शर्तें होने के कारण हमारे लिये अन्यायकारक है, अत: ये शर्तें समानता के आधार पर होनी चाहिये। ९ साल के बाद १९८१ में मेक्सिको के केनकुन में एक कान्फ्रेन्स गौरे साम्राज्यवादी देशों की हुई। जिसमें उन्होने कहा कि, यह

बात सही है कि आप पर अन्याय हो रहा है, लेकिन अब 'ग्लोबलाइजेशन' इस अवस्था में आकर पहुंचा है कि आपके साथ न्याय नही हो सकता, आपको बर्दाश्त करना होगा। तो भी लोग बर्दाश्त करते थे, क्योंकि बर्दाश्त के बाहर नहीं था।

यह तो शूर्पनखा है.....

पहले छह दौर में तो एक ही बात थी, टॅरिफ रिडक्शन, याने उधर से आने वाले माल पर कितनी ड्यूटी लगाना, कितना टॅरिफ लगाना। सातवें दौर में एक नयी बात लायी, 'Non Terrif Measures' लोगों ने पूछा यह क्या बात है? तो उन्होने कहा, कोई बात नहीं, लेकिन इसके ऊपर झगड़ा नहीं हुआ। पिछले तीन-चार साल में झगड़ा क्यों हुआ? यह समझना चाहिये। लोग कहते हैं, डंकेल में एक-एक बात क्या लिखी गई है, जरा हमको बताईये। इसकी कारण मीमांसा समझनी चाहिये। अमरीका की अर्थ-व्यवस्था नीचे जा रही है। कई लोग अभी भी समझते हैं कि अमेरिका आर्थिक दृष्टि से बड़ा प्रबल है। प्रबल रहा है, यह बात सही है। लेकिन यह बात भी सही है कि उसकी अर्थव्यवस्था खोखली होती जा रही है। काफी कर्जा उसके ऊपर है, वहाँ बेकारी बढ़ रही है, मुद्रास्फीति भी बढ़ रही है और उससे भी ज्यादा, जहाँ तक इंटरनेशनल ट्रेड का सम्बन्ध है, उसकी स्पर्धा क्षमता, Competitiveness भी कम हो रही है। चार-पांच साल पहले उनके ख्याल में आया कि 'गेट' में केवल माल के व्यापार का ही विचार होता है, उसमें अब तक अमेरिका सबसे स्पर्धा करती हुई नम्बर एक पर थी। बाद में कई वस्तुओं के मामले में वह पीछे हटने लगी। उसको Compensate करने के लिये Trade in Services लायी जाये, सर्विसेज में हम स्पर्धा क्षमता में हैं। सर्विसेज का मतलब होता है, ट्रान्सपोर्टेशन, एजुकेशन, हेल्थ, फायनेन्शियल इन्स्टीट्यूशन्स ये जो सारी सर्विसेज हैं, इसकी स्पर्धा क्षमता में हम नम्बर एक पर हैं इसलिये ट्रेड इन सर्विसेज लाने का उन्होने सुझाव दिया। विकासशील देशों ने कहा कि साहब, यह तो नहीं था Original में। 'गेट' की शर्तो में सेवाओं की बात नहीं थी, तो अमरीका ने कहा कि पहले यह बात शामिल नहीं थी, यह बात सही है लेकिन अब Globlisation की डिमाण्ड है। ग्लोबलाईजेशन की मैं यहाँ विस्तार से चर्चा नहीं करता सिर्फ इतना ही कहूँगा कि

Globlisation शूर्पनखा के समान है, जो बाहर से बहुत सुंदर दिखाई देती है, लेकिन अंदर से अत्यंत दुष्ट-राक्षसी के समान क्रूर है, दुष्ट है।

अमरीकी दादागिरी

गैर गौरे देशों ने कहा कि पहले इसकी परिभाषा तो कीजिये, आखिर सेवा का व्यापार यह क्या चीज है, तो साम्राज्यवादी देशों ने कहा, अरे भाई Definition, व्याख्या के चक्कर में जायेंगे तो उसमें ३-४ साल निकल जायेंगे अभी इतना तो करो कि Negotiation शुरू कर दो In Course of Negotiation definition will be evolved। कुछ देशों ने कहा कि आप जो सुझाव दे रहे हैं, उसका हमारी अर्थव्यवस्था पर क्या भला-बुरा परिणाम होता है, इसके लिये हमारे देश से Statistics मंगवाने पड़ेंगे। गुंडागर्दी-दादागिरी करने वाले देशों ने कहा कि आप Statistics इकट्ठा करते करते ३-४ साल लगा देंगे, Globlisation अब राह नहीं देख सकता, हर हालत में Negotiations अब शुरू होने चाहिये। वहाँ कैसी दादागिरी चलती है, इसका यह एक उदाहरण है।

आगे चलकर अमरीका के यह ख्याल में आया कि कुल मिलाकर उनकी अर्थव्यवस्था इस तरह नीचे जा रही है कि वह कई सेवाओं में पिछड़ गया है। यह जब दिखाई दिया तो उनको एक सर्वंकष योजना बनानी पड़ी, जिसका पूरा विवरण यहाँ देने की आवश्यकता नहीं, लेकिन ट्रेड इन सर्विसेज के अलावा तीन नये आयटेम वार्ता की मेज पर आये। ट्रेड इन ट्रेड रिलेटेड इंटेलेक्चुअल प्रापर्टी राईट्स, ट्रेड इन ट्रेड रिलेटेड इन्व्हेस्टमेंट मेजर्स और कृषि ये तीन विषय आये। उसके तफसील में जाना यहाँ संभव नहीं लेकिन मैं यहाँ कहुंगा कि इस बात को यदि स्वीकार किया जाता है तो हमारे यहाँ हमारी कृषि नहीं रहेगी, हमारे उद्योग नहीं रहेंगे, हमारे रिसर्च नहीं रहेंगे, हमारी अर्थव्यवस्था नहीं रहेगी।

मुक्त व्यापार कहाँ है?

आज मुक्त व्यापार की बड़ी प्रशंसा की जाती है। फ्री ट्रेड होनी चाहिये। जरा बताओं तो आज, मुक्त व्यापार कहाँ चल रहा है? अमेरिका बाकी सारे देशों को, युरोप के देशों को भी कह रहा है कि मुक्त व्यापार Free Trade होना चाहिये। लेकिन अमरीका स्वयं अपने देश में Free Trade के लिये तैयार नहीं है। अमेरिका संरक्षण का (Protectionism) का अवलम्बन कर रही है। हमारा क्या, युरोप के माल को भी वह अपने यहाँ नही आने देती बाधा पैदा कर रही है और हमें बता रही कि मुक्त व्यापार होना चाहिये, हमें बता रही कि खुली आयात होनी चाहिये। अमरीका में खुली आयात नहीं हो सकती और हमें बता रही कि खुली आयात होनी चाहिये। हमें बताया जा रहा है कि आपके किसानों को सब्सिडी नहीं देनी चाहिये और उधर अमेरिका ने अपने किसानों की सब्सिडी बढाई है। माने, अमरीका के लिये स्टैण्डर्ड अलग है और बाकी देशों के लिये स्टैण्डर्ड अलग है। और इसके कारण उन्होने जो ऐसे नियम बनाये जिसका उल्लेख सुपर ३०१ और स्पेशल ३०१ के नाम से होता है। १९८८ में उनका जो Omnibus Competetive Act बना उसमें ये ऐसे सेंक्शन्स (प्रावधान) रखे गये हैं कि अमरीका के माल की खुली आयात आपके देश में होनी ही चाहिये। अगर आप अमरीकी माल के लिये खुली आयात नहीं रखेंगे तो आपके खिलाफ सेक्शन्स लगाये जायेंगे। आपके खिलाफ आर्थिक बहिष्कार का कदम उठाया जायेगा। इस प्रकार हमारे आयात और निर्यात के बारे में अमरीका एक तरह से ब्लेक मेलिंग का काम कर रही है। हमें सिखा रही है कि मुक्त व्यापार यह एक अच्छी चीज है। वास्तव में मुक्त व्यापार यह कोई सिद्धान्त नहीं है। जैसी जिसकी सुविधा हो, इंडस्ट्रियल रिव्होल्यूशन के पहले इंग्लैण्ड मुक्त व्यापार का घोर विरोधी था, क्योंकि जर्मनी यह सबसे प्रबल था और जर्मन माल ब्रिटिश मार्केट में बेचा जाता था। इन्होने कहा कि खुला व्यापार अच्छा तत्व नहीं है, संरक्षण होना चाहिये। जब इंडस्ट्रियल रिव्होल्यूशन हो गई तो इंग्लैण्ड का माल सस्ता और अच्छा निकलने लगा तब इन्होने कहा कि यह बड़ा पवित्र सिद्धान्त है, मुक्त व्यापार होना चाहिये। मानो जो सुविधाजनक हो, वही कानून। ये कोई सिद्धान्त नहीं है। आज कहीं भी मुक्त व्यापार नहीं चल रहा है।

डंकेल के खतरे...

यदि डंकेल सुझाव माने जाते हैं तो हमारे उद्योगों में विदेशी पूंजी को मुक्त प्रवेश मिल जायेगा। आज ही हमारी अर्थव्यवस्था ऐसी है कि उनकी आवश्यकताएं अलग है और हमारी आवश्यकताएँ अलग हैं। उनकी आवश्यकता है कि कम से कम लोगों के द्वारा ज्यादा से ज्यादा उत्पादन करना और हमारी आवश्यकता है कि ज्यादा से ज्यादा लोगों को रोजगार देना। इसलिये गांधीजी ने कहा था 'Not mass production but production by masses' हमारी आवश्यकताएं अलग अलग हैं। देश के देश में भी ज्यादा लोगों को रोजगार मिले इसलिये छोटे उद्योगों को संरक्षण देना आज हमारे लिये बाध्य हो गया है। जैसे कपड़ा उद्योग मिलों के साथ खुली स्पर्धा रही तो लाखों बुनकर बेकार हो जायेंगे, भुखमरी के शिकार होने लगेंगे। इसलिये व्यवस्था करनी पड़ी कि कुछ Line of demarcation की जाए। ऐसा ऐसा कपड़ा है, वह बुनकरों के लिये संरक्षित रखा जाये, ऐसा कपड़ा है जो Power loom के लिये संरक्षित रखा जाए, बाकी कपड़ा मिलें पैदा कर सकें। देश में भी संरक्षण की आवश्यकता है। ये जो हमारा परम्परागत क्षेत्र Traditional sector है, जो परम्परागत उद्योग चलते आये हैं, उनके बारे में यह तथ्य बहुत सारे पढ़े लिखे लोगों को मालुम नहीं है और वे समझते हैं कि विदेशी पूंजी Sophisticated Industry से ज्यादा मिलती है जबकि असलियत यह है कि ७० प्र. श. विदेशी पूंजी हमारे इन परम्परागत छोटे उद्योगों से आज हमारे देश में आ रही है। जरा सोचिये, यदि विदेशी पूंजी को खुला प्रवेश मिला तो क्या यह परम्परागत उद्योग टिक सकेंगे? इनकी तो बात ही क्या है, मध्यम उद्योग भी नहीं टिक सकेंगे और केवल मध्यम उद्योग ही क्यों जहाँ टोमको, थम्सअप और गोदरेज जैसे बड़े उद्योग नहीं टिक सकते, तो ये लोग कहाँ तक टिक पायेंगे ? अभी तक देशी उद्योगों को यह वहम था कि शायद विदेशी उद्योगपति अपने को पार्टनर बनायेंगे, जुनियर पार्टनर बनायेंगे। हमारी कुछ हैसियत रहेगी लेकिन अब वे भी मांग कर रहे हैं प्रधानमंत्री जी से फिक्की ने मांग की है कि साहब ये विदेशी पूंजी से हमें जरा संरक्षण दीजिये नहीं तो हम धुल जायेंगे, Wash out हो जायेंगे। डंकेल के प्रस्ताव स्वीकार करने पर विदेशी पूंजी को खुला प्रवेश मिल जायेगा तब क्या आप समझते हैं कि हमारे ये सारे उद्योग, हमारी सारी सर्विसेस, हमारे सारे जो राष्ट्रीयकृत बैंक हैं वे सभी विदेशी बैंकों के सामने टिक पायेंगे? ये सब बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के हाथों में चले जायेंगे।

किसानों की पूरी बर्बादी....

और, जहाँ तक किसानों का सम्बन्ध है, उनके लिये तो पूरी बर्बादी है। यहाँ पेटेन्ट लॉ है , १९७० का हमारा पेटेन्ट लॉ है। अमरीका का भी पेटेन्ट लॉ है, जो यहाँ लागू हो जाये, ऐसा वे समझ रहे हैं, अन्तर क्या है? यह समझ लेना चाहिये। पेटेन्ट का मतलब होता है कि कोई भी वैज्ञानिक, व्यक्ति या संस्था यदि कोई नयी खोज करती है तो उस खोज के लिये, कुछ सालों तक उस व्यक्ति को उस वस्तु पर एकाधिकार देना, मुआवजे के नाते, इसको पेटेन्ट कहा जाता है। हमारे और उनके पेटेन्ट लॉ में अन्तर यह है कि हमारे पेटेन्ट लॉ में आम तौर पर ५ साल से ७ साल तक का पेटेन्ट हो सकता है। और उनके यहाँ २० साल से २५ साल तक का पेटेन्ट हो सकता है। माने, पूरी पीढी उसमें बर्बाद हो जाती है। दूसरा अन्तर यह है कि हमारे यहाँ पेटेन्ट लॉ में प्रक्रिया का पेटेन्ट होता है, उत्पादन का पेटेन्ट नहीं होता। Process का पेटेन्ट होता है Product का पेटेन्ट नहीं होता। मान लीजिये, च्यवनप्राश है। गुरुकुल कांगड़ी ने एक विशेष प्रक्रिया से च्यवनप्राश बनाया, उस प्रक्रिया का पेटेन्ट हो सकता है। product जो है, च्यवनप्राश, उसका पेटेन्ट हमारे यहाँ कानून के अंदर नहीं हो सकता। जिसका अर्थ यह है कि कोई भी दूसरा व्यक्ति या संस्था दूसरे किसी प्रक्रिया से अगर च्यवनप्राश बनाता है तो उसको बनाने का, मार्केट में लाने का, बेचने का और उस पर मुनाफा लेने का अधिकार है। तो उत्पादित वस्तु का नहीं, प्रक्रिया का पेटेन्ट हमारी विशेषता है।

पेटेन्ट का झमेला

अमरीका में तो उत्पादित वस्तु का ही पेटेन्ट है। अर्थात च्यवनप्राश का आपने पेटेन्ट ले लिया तो दूसरा कोई भी व्यक्ति अन्य किसी भी प्रक्रिया से च्यवनप्राश नहीं बना सकता। और ये पेटेन्ट उन्होने कहाँ कहाँ लागू किये है? हमारे कानून में वनस्पति, पेड़ पौधे, इनके पेटेन्ट की कोई व्यवस्था नहीं है। उनके यहाँ इसके भी पेटेन्ट हैं। इसका मतलब यह है कि हमारे यहाँ के वृक्ष-वनस्पति यदि वे लेकर, अपने देश में जाकर कहते हैं कि प्रयोगशाला में हमने इसको ट्रीटमेन्ट दिया है और चूंकि इसमें से हमने कोई Varaiety पैदा की है तो इस वनस्पति पर, इस पेड़ पर हमारा ही पूरा अधिकार हो गया। २० साल

तक उनका अधिकार हो जायेगा। अरे, हमारे पूर्वजों ने १५ हजार साल तक ये वृक्ष, पेड़, पौधे और वनस्पतियां बढ़ाई, इसी के आधार पर यहाँ आयुर्वेद और बाकी विज्ञान हमारे यहाँ विकसित हुए। १५ हजार साल तक हमने जो विज्ञान-शास्त्र विकसित किये उसके लिये हमारे पास पेटेन्ट नहीं और तुम अपनी लेबोरेटरी में ले जाते हो और दावा करते हो कि इसे हमने ट्रीटमेन्ट दिया है इसलिये अब इस पर हमारा अधिकार है। यह हमारा पेटेन्ट है। परिणाम क्या होगा? हमारी सारी वनस्पति उनके हाथों में, उनके अधिकार में रहेगी और उनकी अनुमति के बगैर हम यहाँ उगा नहीं सकते और जो उगाई जायेंगी उसके ऊपर अमरीका का अधिकार रहेगा। ये ऐसे राक्षसी लोग हैं कि उन्होने प्राणियों और पशुओं पर भी पेटेन्ट लागू किया है। अर्थात् हमारे गाय का, भैंस का, बकरी का, और चूहों का भी पेटेन्ट हो सकता है। एक बार अगर वे कहते हैं कि आपके यहाँ की गाय और चूहा उसको लेबोरेटरी में ले जाकर उसको ट्रीटमेंट देते हैं तो वे उनके हो गये। आपकी गाय पर आपका अधिकार नहीं, गाय के बछड़े पर, आपकी बकरी पर, आपके चूहों पर आपका अधिकार नहीं। वे कहेंगे, उनके हुकुम के मुताबिक, उनकी आज्ञा के मुताबिक आपको चलना पड़ेगा। आपके बीज पर आपका अधिकार नहीं रहेगा। हमारे यहाँ आम तौर पर ऐसी पद्धति है कि किसान एक फसल आने के बाद उसी में से कुछ बीज अलग रख देता है और अगली फसल वह इस बीज के सहारे निकालता है। लेकिन बीज का पेटेन्ट अमरीका ले लेगा और फिर कहेगा कि यह हमारा पेटेन्ट है। आपको अपने बीज के सहारे दूसरी फसल निकालने का अधिकार नहीं है। दूसरी फसल अमरीकन बीज के ही सहारे निकालनी पड़ेगी और अमरीका कहेगी उस कीमत पर वह बीज खरीदना पड़ेगा। उनके गुप्तचर रहेंगे यह देखने के लिये कि क्या यहाँ पेटेन्ट कानून का उल्लंघन तो नहीं हो रहा? और, आपने यदि अपनी पहली फसल में से कुछ बीज बाजू में रखकर उससे दूसरी फसल निकाली तो उनके गुप्तचर उनको खबर देंगे। वाशिंगटन से दिल्ली खत आ जायेगा कि अमुक अमुक स्थान के किसानों ने पेटेन्ट कानून का उल्लंघन किया है, अपने ही बीज के सहारे अगली फसल निकाली है, हमारा बीज न लेते हुए अत: उनको दंड होना चाहिये, उनको जेल में भेजना चाहिये। दिल्ली को उसके मुताबिक चलना पड़ेगा। हर कानून में यह व्यवस्था रहती है कि आपने मुझ पर आरोप लगाया कि मैं चोर हूँ तो मुझे चोर सिद्ध करने की जिम्मेदारी भी आपकी ही होगी। डंकेल कहते है, ऐसा नहीं है। हमारी बहुराष्ट्रीय कम्पनी दिल्ली को लिखेगी कि

अमुक स्थान के किसानों ने पेटेंट का उल्लंघन किया है। आप उनको दंड दो। और, हमने उल्लंघन नही किया यह हमें ही सिद्ध करना पड़ेगा, उनके ऊपर जिम्मेदारी नही, वे तो बस पत्र लिख कर मुक्त हो गये।

बड़े फार्मस् का शिगुफा

हमारे बीज के सहारे हम अपनी खेती नही चला सकते, केवल इतनी ही बात नहीं है। अभी से यह चर्चा शुरू कर दी है कि दुनिया का कल्याण होना चाहिये, इसके लिये दुनिया में अनाज ज्यादा होना चाहिये। छोटे-छोटे किसान रहे तो फिर अनाज ज्यादा नहीं हो सकता। इसलिये बड़े फार्मस की आवश्यकता है। इसलिये यह योजना आ रही है कि छोटे किसानो को छुट्टी दी जाए उन्हे थोड़ा थोड़ा मुआवजा देकर उद्योगपतियों को कृषि के क्षेत्र में, ग्रामीण क्षेत्र में लाया जाय। पहले देशी उद्योगपतियों को, बाद में विदेशी कम्पनियों को लाकर बड़े फॉर्मस् यहाँ तैयार किये जाय। जितने किसान मजदूर के नाते काम करेंगे उन्हे कुछ मुआवजा मिलेगा, जमीन हाथों से निकल जायेगी। बड़े फॉर्मस् यहाँ तैयार होंगे, सारा नक्शा ही बदल जायेगा। यह बात आ रही है।

लोगों को धोखे में रखा जा रहा

किन्तु, मैंने कहा कि विदेशी पूंजी के हाथ बहुत लम्बे हैं। एकदम खुला विद्रोह न हो, इसलिये पहले से ही कुछ गलत-फहमियां फैलाने का काम चल रहा है। एक बात यह कही जा रही है कि साहब, डंकेल पूरा कैसे खराब हो सकता है? जो लोगों को गुमराह कर रहे है, क्या वे यह जानते नहीं है कि यह अव्यवहार्य है? डंकेल में कहा गया है कि 'This is a package deal' लेना होगा तो पूरा लेना होगा, छोड़ना होगा तो पूरा छोड़ना होगा। यह कहना कि उसमें कुछ अच्छाई है, जरा विचार करो, क्या यह ईमानदारी की बात है? मान लीजिये, एक लड़की है और एक लड़का है। लड़का ऐसा है कि उसका चेहरा सुंदर है, Handsom है, लेकिन पीछे कूबड़ है। क्या आप लड़की को ऐसा उपदेश दे सकते हैं कि बेटी इसके साथ शादी कर लो। इसके सुंदर चेहरे का स्वीकार करो और इसके कूबड़ का त्याग कर दो। क्या ऐसा आप बोल सकते है? अरे, लेना होगा तो पूरे लड़के को लेना होगा उसके सुंदर चेहरे के साथ और उसके कूबड़ के साथ। छोड़ना होगा तो पूरा छोड़ना होगा। ये पैकेज डील की बात है। लेकिन लोगों को गुमराह करने

की योजना विदेशियों ने बहुत पहले से की है और जो राज्यकर्ता उनके आशीर्वाद से, तृतीय विश्व के देशों में आज पदासीन है, कोरिया जैसा एक छोटा सा देश छोड़ दीजिये तो तृतीय विश्व के राज्यकर्ता और अमेरिका के बीच यह सांठगांठ है कि साहब आप जितना बोल रहे, उतना अगर हमने एकदम प्रकट कर दिया तो जनता में असंतोष भड़क जायेगा, हमारे खिलाफ विद्रोह हो जायेगा, हमको अपदस्थ किया जायेगा। Dislodge किया जायेगा और हम Dislodge हो जायेंगे तो नये राज्यकर्ता आपके एजेंट के नाते कहाँ काम करेंगे? तो आपके हित के लिये यह आवश्यक है कि राज्यकर्ता के रूप में हमें आपने प्रस्थापित रखना चाहिये और इसलिये जनता के खिलाफ जाने वाली बातें एकदम उनको पता न चले और आर्थिक घटनाओं के बारे में जनता को अंधेरे में रखा जाए। इसलिये आप देखते हैं कि अखबारों में किसने किसकी टांग खींची है, किसने किसको गाली दी है, इसकी ही ज्यादा चर्चा आती है, लेकिन आर्थिक क्षेत्र की बड़ी बड़ी घटनाओं का भी उल्लेख नहीं होता। अपने देश की जनता को अंधरे में रखने की यह व्यवस्था उन्होने की है। धीरे धीरे आता है। जैसा अपने यहाँ कहा गया है कि हमने अभी डंकेल पर हस्ताक्षर नहीं किये है, सबको पूछे बगैर हम करने वाले नहीं है। पर आपको आश्चर्य होगा यह जानकर कि डंकेल की कई धाराएं-प्रावधाएं, जिन पर उन्होने अभी से क्रियान्वयन, Implementation शुरू कर दिया है। चाहे Subsidy के बारे में हो, सार्वजनिक वितरण प्रणाली के बारे में हो या उत्तर प्रदेश के बारे में हो, शुरू भी कर दिया है और कहते हैं कि हमने कुछ नहीं किया है। पार्लियामेंट के पिछले चार सत्रों में, जब लोगों ने कहा कि डंकेल हमारे जीवन-मरण का प्रश्न है, इस पर सदन में चर्चा होनी चाहिये तो हमारे प्रधानमंत्री जी इसे टालते रहे और पिछले सत्र में एक दिन लोकसभा को बढाया गया, उसमें डंकेल का, गेट का उल्लेख आया। संसद के आखिरी दिन अंतिम आयटम के रूप में चर्चा के लिये इसे रखा गया। उसके पहले बिलकुल महत्व नहीं रखने वाले ऐसे ऐरे गैरे- नत्थु खैरे आयटम रखे गये। तब अनेक सदस्यों ने कहा कि आप यह योजनापूर्वक टाल रहे है। कम से कम आप यहाँ हमें आश्वासन दीजिये कि जब तक इस पर पार्लियामेंट की सहमति प्राप्त नहीं हो जाती, हम इस पर हस्ताक्षर नहीं करेंगे। प्रधानमंत्री ने इस विषय पर For the first time इसका जवाब दिया और कहा कि मैं पार्लियामेंट की बहुत इज्जत करता हूँ। सभी बातें आपको पूछकर ही होनी चाहिये, यह मैं मानता हूँ। लेकिन यदि ग्लोबलाइजेशन की मांग रही

और पार्लियामेंट के अगले सत्र के पहले हस्ताक्षर करना जरूरी हुआ तो मैं पार्लियामेंट से पूछे बगैर हस्ताक्षर कर सकता हूँ। पहली बार सच्चाई की बात उन्होने पार्लियामेंट में कही।

एक बार फंसे तो......

तो, इस प्रकार लोगों को धोखा देने का काम चल रहा है। बहुत लोगों को इसका पता नही है कि डंकेल यह कोई मामूली समझौता नही है। बाकी जो समझौते हैं, International Monetary Fund, Multinationals और World Bank के साथ जो समझौते हैं, उन्हें, यदि दिल्ली की सत्ता बदल जाती है तो नया सताधारी दल इन समझौता को ठुकरा सकता है, Cancel कर सकता है। लेकिन डंकेल समझोते को इस तरह से ठुकराया नहीं जा सकेगा। हो सकता है कि दिल्ली में आज जो सत्ताधारी पार्टी है वह बदलकर दूसरी सत्ताधारी पार्टी सत्ता में आ जाये, उस पार्टी को भी यह अधिकार नहीं हैं कि डंकेल प्रस्ताव जिस पर सरकार ने हस्ताक्षर किये हैं उसे वह ठुकरा सके क्योकि यह एक 'इन्टरनेशनल ट्रीटी' हो जाती है, इसलिये यह उनके लिये भी बन्धनकारक रहेगा और यदि ठुकराना है तो हिम्मत रखनी पड़ेगी जागतिक युद्ध के लिये अथवा जागतिक आर्थिक बहिष्कार के लिये तैयारी रखनी पडेगी। बाकी समझौतो के समान पार्लियामेंट के द्वारा कैन्सल नही किया जा सकता। इस समझौते को एक विशेष प्रतिष्ठा, Status आ गई है।

पूंजीवाद भी टूटेगा

बहुत बार लोग सोचते हैं कि भाई इतना यदि खराब है तो बाकी लोग, कैसे स्वीकार कर रहे है ? और हमारे देश में तो प्रचार यह हो रहा है कि सभी देशों ने इसे स्वीकार कर लिया है। हमने दिल्ली में भी यह बात सुनी कि सब देशों ने यह स्वीकार कर लिया है, केवल भारत ही बचा है। यह वास्तव में गलत प्रचार है। मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि ये अमरीका की जो गुंडागर्दी है, दादागिरी है। एक तो मैंने कहा कि अमरीका की अर्थव्यवस्था नीचे जा रही है और जैसे-जैसे तेजी से वह नीचे जा रही है, वैसे-वैसे अन्य देशों के शोषण करने की प्रक्रिया उतनी ही तेजी में बढ रही है। मैं आश्वासन पूर्वक आपको यह बताना चाहता हूँ सन् २०१० वां साल आने तक दुनिया का नम्बर एक का

देश, यह जो स्थान अमरीका का है, वह खत्म होगा और जैसे कम्युनिज्म खत्म हुआ वैसे पूंजीवाद Capitalism भी टूट जायेगा। यह बात बात वे भी जानते हैं। उनके बड़े-बड़े शास्त्रज्ञ जैसे मैनेजमेंट सांयन्स के पीटर ड्रकर्स (Peter Drucker) हैं, कैपिटलिज्म के आज के प्रवक्ता सेण्डरसन (Sanderson) है, सबने कहा है कि Capitalism टूट रहा है, अमेरिका टूट रहा है। इसको कैसे बचाना? अपने सहारे इसको नहीं बचा सकते इसलिये राक्षसी-दानवी मार्ग सोचा गया कि दुनिया के बाकी के देशों को, उनका शोषण करते हुए, उनकी अर्थव्यवस्था अपने कब्जे में लेते हुए, अपनी मृत्यु को २५ - ३० साल तक आगे ढकेलना, मरनेवाले तो है लेकिन २०-३० साल तक और जिन्दा रहेंगे, इसके लिये दुनिया के बाकी सब देशों को खा डालना, यह राक्षसी प्रवृत्ति लेकर अमरीका का काम चल रहा है। हमारे यहाँ के कुछ रोमान्टिक लोग कहते हैं हम तो डूबे हैं सनम, तुमको भी लेकर डूबेंगे। यह अमरीका की प्रवृत्ति है। वो डूबने वाले हैं, बच नहीं सकते लेकिन खुद डूबने के पहले हम सब लोगों को लेकर डूबना चाहते हैं।

इच्छाशक्ति का अभाव

हमारे देश के कुछ लोग कहते है कि अरे इनका आप क्या विरोध कर सकते हैं ? दुनिया की सारी सम्पत्ति इनके पास है, सरकार इनके साथ है, आप क्या कर सकेंगें ? फिर विरोध नहीं कर सकते तो स्वीकार ही कर लो, काहे के लिये झगड़ा करते हो ? हमारे यहाँ देहात में लोग कहते है, कहाँ तक सच है मुझे पता नहीं कि घोड़ा जब जंगल में से जाता है और उस जंगल में शेर है, घोड़े को गंध आ जाती है कि इधर शेर है, तो वह डर जाता है, घबराता है लेकिन ऐसी कुछ प्रवृत्ति है कि शेर जिस दिशा में है, उसी दिशा में उसके पैर चल पड़ते हैं। वह अपनी मृत्यु की दिशा में खिंचा चला जाता है। वेसे ही हमारे यहाँ के जो लोग, जिनके अन्दर राष्ट्रीय इच्छा शक्ति नहीं हैं, जिनके अन्दर राष्ट्रभक्ति न होने के कारण इच्छा शक्ति नहीं है, वो कह रहे है कि हमारे विरोध का क्या फायदा होगा? दुनिया उनके साथ हैं, हम तो वैसे ही मरनेवाले हैं, घोड़े के समान अपनी मृत्यु की और जाना चाहते हैं।

जो यह जानते हैं कि राष्ट्र गुलामी की ओर जा रहा हैं, फिर भी यह कहते हैं कि विरोध करने से क्या होगा? उनका यह सोचना गलत है। विरोध करने से धीरे धीरे माहौल

बनता है। आप जानते है, कारगिल का मामला हुआ, वहाँ कच्छ-भुज में नमक बनाने के मामले में कई बातें हुई, सब जानते हैं उसे पुन: दोहराने की आवश्यकता नहीं है। नेताओ ने स्टेटमेंन्टस दिये, वक्तव्य प्रसारित किये उनका काम ही वक्तव्य देने और अखबारों में अपनी छवि देखने का होता है। भारतीय किसान संघ ने २५ जून को कच्छभुज के किसानों का वहाँ बड़ा प्रदर्शन (डिमान्स्ट्रेशन) किया है। प्रदर्शन करनेवाले किसानों की संख्या ५० हजार थी जिनमें ८ हजार महिला किसान थी ओर फिर २५ सितम्बर को गुजरात की राजधानी गांधीनगर में ४ लाख से अधिक किसानों का प्रदर्शन हुआ। इस प्रदर्शन के बाद कारगिल कम्पनी का वक्तव्य आया कि हम गुजरात से बोरिया-बिस्तरा लपेट कर जा रहे हैं, फिर वापिस नहीं आयेंगे।

युरोप में भी विरोध

इनका टेक्नीक ऐसा है कि आर्थिक क्षेत्र में क्या घटनाएं हो रही है, जनता को पता ही नहीं चलने देना और यह बात नहीं कि इसके केवल हम भुक्तभोगी है, हमारे तृतीय विश्व के देशों में तो जागृति हो रही है, कई लोगों से हमारी मुलाकातें भी हुई हैं। श्रीलंका, सिंगापुर, हांगकांग, फिलीपीन्स ऐसे कई देशों के लोगों के साथ हमारी मुलाकातें हुई है, वे भी जैसा हम यहाँ स्वदेशी जागरण मंच चला रहे है, अपने देशों में जनता को जागृत करने का काम कर रहे है, इस दिशा में काम शुरु हुआ है और वहाँ भी यही प्रक्रिया है कि लोगों को अंधेरे में रखना और जब आसमान टूट पड़ता है तो लोग सोचते हैं, अब क्या करना ? अब तो तैयारी करने के लिये भी समय नहीं है। अभी तक डंकेल का काम रुका हुआ है तो वह हमारे कारण नहीं रुका, तो वह युरोपियन कम्युनिटी के कारण रुका है। युरोपियन कम्युनिटी के १२ देशों में भी यही प्रतिक्रिया हुई है। वहाँ के किसानों को पता चला कि यह कितनी घातक, कितनी खतरनाक बात है तो अब वहाँ भी इसके विरोध में जन आंदोलन उभरने लगे है। फ्रांस में किसानों की संख्या सबसे ज्यादा है। युरोप के १२ देशों में से १० प्र. श. किसानों की संख्या फ्रांस में है। कुछ सप्ताह पहले वहाँ के किसानों ने 'फ्रांस-बंद' का कार्यक्रम लिया। आपको मालूम होना चाहिये कि फ्रांस की सरकार ने इस पर हस्ताक्षर किये हैं। फ्रांस के किसानों ने सरकार से मांग की है कि आपने जो गलत ढंग से उस पर हस्ताक्षर कर दिये है, उसको वापस लो, अपने

हस्ताक्षर Withdraw करो। किसानों के उग्र आदोलन से चिंतित फ्रांस की सरकार ने किसान आंदोलन का बहाना बताकर अमेरिका को बताया है कि हस्ताक्षर किये हैं, यह बात सही है, लेकिन किसान विरोध कर रहे हैं, हमें पुनर्विचार करना पड़ेगा।

जब मैं अमेरिका का नाम लेता हूँ तो मेरा मतलब अमेरिकन जनता से नहीं है। ये राक्षसी लोग सभी अमरीकी जनता नहीं हैं। यह तो अमरीका के सत्ताधारी लोग और अमेरिका के कैपिटेलिस्ट (पूंजीवादी) का सारा खेल है। वे केवल तृतीय विश्व के देशों को ही नहीं लूटते बल्कि युरोप के देशों का भी शोषण करना चाहते हैं। इतना ही नहीं अपनी जनता का भी शोषण करना चाहते हैं। इसलिये तीन साल पहले नार्थ अमेरिकन की फ्री ट्रेड एग्रीमेंट 'नाफ्टा' नामक एक एग्रीमेन्ट हुआ। इनकी पद्यति भी बड़ी चालाकी भरी होती है। जब कोई समझौता करते हैं तो उसके सारे ब्यौरे, Details उसका सारा तफसील प्रकाशित नहीं करते, आधी चीजें Publish करते है। अत: जनता को पता नहीं चल पाता। इसलिये जब यह एग्रीमेन्ट हुआ तब किसी ने खास विरोध नहीं किया। जब अमल करना शुरु हुआ तो मेक्सिको, युनाइटेड स्टेट्स और कैनेडा के गरीब-मजदूर लोगों को पता चला कि यह हमारे लिये बड़ा खतरनाक है, तब उन्होने उसके खिलाफ आदोंलन शुरु किया। वहाँ की सरकारों ने पार्लियामेंट में अपने दल के बहुमत के बल पर इस एग्रीमेन्ट पर स्वीकृति की मोहर लगा दी किन्तु अब जनता के आदोंलन के सामने उन्हे भी पुनर्विचार के लिये बाध्य होना पड़ रहा है। कैनेडा में तो हाल ही में सम्पन्न चुनावों में जनता ने इस पर हस्ताक्षर करनेवाले सत्ताधारी दल को ही उखाड़ फेंका। उसे सत्ता से अपदस्थ कर दिया, उसके केवल दो ही सदस्य चुनकर आये। उनको उखाड़ने के जो प्रमुख कारण थे उनमें एक यह था कि आपने जनता-विरोधी, देश विरोधी समझौते पर हस्ताक्षर किये। जनता ऐसी सरकार को बर्दाश्त नहीं करेगी। वहाँ अब जो नई सरकार आयी है उसने भी फ्रांस की तरह इस समझौते पर नये सिरे से पुनर्विचार का इरादा घोषित किया है। कैनेडा के नये प्रधानमंत्री ने समझौते पर Renegotiation की मांग की है।

वैसे अमरीका में हिन्दुस्तान की खबर को कोई ज्यादा महत्व नहीं देता। यदा-कदा कोई छोटी सी खबर वहा छप जाती है। आपको आश्चर्य होगा यह जानकर कि यहाँ जो कारगिल का झमेला चला, उसके बारे में वहाँ के अखबारों में खबर छपी। वहाँ कुछ

पर्यावरणवादी-मानवतावादी संस्थाए है, जो विशुद्ध अमरीकन लोगों की ही हैं। ऐसी कुल १२ संस्थाओं ने एकत्रित आकर कारगिल कम्पनी के बारे में शोध किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुंची कि कारगिल की जो शर्तें हैं वे अमानुष हैं, मानवता विरोधी है, पर्यावरण बिगड़ जायेगा, मनुष्यों का सन्तुलन बिगड़ जायेगा। इन संस्थाओं ने कारगिल के काम पर रुकावट डालने का आग्रह करते हुए तीव्र प्रदर्शन किया। मतलब यह कि जब लोगों के ख्याल में इसके खतरनाक पहलू आते है, तब विरोध शुरु होता है और लोगों में स्वाभिमान जागृत होता है।

स्वदेशी आंदोलन फैलता जा रहा

आज तृतीय विश्व के सभी देशों में जैसा हमारा स्वदेशी जागरण मंच का कार्य चल रहा है, वैसा ही स्वदेशी आंदोलन शुरु हुआ है। स्वदेशी की भावना उस सभी देशों में जागृत की जा रही है। स्वदेशी जब कहा जाता है तो उसका सम्बन्ध केवल वस्तुओं से नहीं है , स्वदेशी एक भावना है, एक Spirit है। स्वदेशी का मतलब होता है कि हरेक देश अपनी संस्कृति के अनुसार, अपनी अपनी पद्धति के अनुसार अपना विकास करे, इसका नाम स्वदेशी है। अब यह भावना विभिन्न देशों में किस तरह बढ़ रही है, इसकी जानकारी हाल ही में घटित कुछ घटनाओं से मिलती है। अभी दक्षिण-पूर्वी एशियायी देशों की कान्फ्रेन्स होने वाली थी। अमरीका ने कहा कि हम एक पर्यवेक्षक के रुप में, Observer के नाते इस परिषद में उपस्थित रहना चाहते है। मलेशिया के प्रधानमंत्री महाथिर मोहम्मद कट्टर देशभक्त हैं, बुद्धिमान भी है। उन्होंने सब देशों को लिखा कि अमरीका की मांग ठुकराना चाहिये, उसे स्वीकार नहीं किया जाना चाहिये। हमारी South east Asia के Conference में हम अमरीका का पर्यवेक्षक Observer कतई बर्दाश्त नहीं करेंगे। यदि अमरीका के दबाव में आकर आपने उनके Observer को इस परिषद में उपस्थित रहने की अनुमति दी गई तो मलेशिया इस परिषद में भाग नहीं लेगा। मलेशिया जैसा छोटा सा देश इतनी हिम्मत दिखा सकता है, हमारे प्रधानमंत्री नहीं दिखा सकते? क्या कारण है, यह आप समझ सकते हैं।

हमारे यहा माइकेल जेक्सन का कार्यक्रम तय हुआ था। यह अलग बात है कि वह अब अस्पताल में है। सब जानते हैं कि माइकेल जेक्सन केवल भारतीय नहीं बल्कि एशियायी संस्कृति को नष्ट करने का कार्यक्रम कर रहा है। फिर भी हमारे देश में उसका

स्वागत करने की आतुरता दिखाई जा रही है। लेकिन चीन और कोरिया जैसे दो देश निकले जिन्होने कहा कि मायकेल जेक्सन को हम हमारे यहाँ कदम नहीं रखने देंगे, क्योंकि उसके कार्यक्रम सांस्कृतिक आक्रमण हैं। यह प्रतिबन्ध करने वाला केवल चीन जैसा बड़ा देश ही नहीं, कोरिया जैसे छोटा देश भी यह साहस दिखा सकता है। लेकिन हमारे प्रधानमंत्री नहीं दिखा सकते। वे तो राजीव फाउण्डेशन के लिये माइकल जेक्सन का स्वागत करने को तैयार है।

तो, स्वदेशी एक स्पिरिट है। इस स्पिरिट को समझेंगे तो फिर डंकेल का कैसा विचार करना हम समझ सकते है। इंग्लैण्ड में महारानी ने सोचा कि ब्रिटिश कार इतनी अच्छी नहीं, जितनी जर्मन कार है। महारानी के लिये जर्मन कार का ऑर्डर चला गया। बात जब फैली तो जनता ने इसका तीव्र विरोध किया, वहाँ भी प्रदर्शन हुए, आखिर वह ऑर्डर कैन्सल करनी पड़ी। ज्यादा सुविधाजनक जर्मन कार की बजाय कम सुविधाजनक ब्रिटिश कार में ही बैठने के लिये महारानी को बाध्य होना पड़ा यह है स्वदेशी का Spirit। हमारे देश में वियतनाम के प्रेसीडेण्ट हो ची मिन्ह आये थे, जैसे वे हवाईजहाज से नीचे उतरे, पत्रकारों ने उनका स्वागत किया। उनकी पैण्ट को एक जगह सिलाई थी। पेंट फट गई होगी इसलिये उसे सिलाया गया था। अब उनके देश में जैसा कपडा बनता है, वह ज्यादा अच्छा नही बनता, इसलिये जल्दी फट जाता है। एक पत्रकार ने पूछा 'प्रेसीडेण्ट महोदय, आपकी पेंट को यहा सिलाई है, क्या बात है? क्या पेंट फट गया है ?" इस पर हो ची मिन्ह का जवाब आया "क्षमा कीजिये, मेरा देश इतना ही खर्चा कर सकता है, इससे ज्यादा खर्चा नहीं कर सकता 'My country can afford only this much' क्या आप समझते हैं कि एक देश का प्रेसीडेण्ट विदेश का अच्छा कपडा नहीं पहन सकता ? तो यह स्पिरिट का सवाल है। स्वदेशी की भावना का प्रकटीकरण है। आप जानते होंगें कि गांधीजी का दांडी मार्च हुआ। उसके बाद गांधी-इर्विन के बीच वार्ताएं हुयी। एक तरफ इर्विन बैठे है, सामने गांधीजी बैठे हैं। चर्चा हो रही है, चाय का समय आया तो चाय मंगवाई गई। गाधीजी चाय नहीं लेते थे अत: उनके लिये नीबू पानी मंगवाया गया। गांधीजी ने जानबूझकर इर्विन के देखते-देखते अपने पास की एक पुड़िया निकाली, उसे धीरे से खोला और नींबू-पानी में डालकर उसे घोला और पी गये। इर्विन ने पूछा यह क्या है? तो गांधीजी ने कहा कि आपके नमक

कानून का उल्लंघन करते हुए मैंने जो नमक बनाया था, उसकी पुड़िया में अपने साथ लाया था, वही नमक मैंने अपने नींबू-पानी में मिलाया। यह स्वदेशी की भावना है। यही स्वदेशी का Spirit है। केवल विदेशी वस्तुएं कौन सी हैं, देशी कौनसी हैं, यह बात नहीं है।

स्वदेशी की यह भावना जागृत होनी चाहिये। और, जैसा मैंने कहा कि हमारे यहा अन्तर्राष्ट्रीयता यह राष्ट्रीयता की चेतना का विकास है। Internationalism is the flower in the national conciousness उनमें परस्पर विरोध नहीं है। हमारे यहाँ मानवीय चेतना के विकास के विभिन्न स्तर हैं, Stages हैं। व्यक्ति की अपनी चेतना है, उसका विकास होता है तो परिवार की चेतना उसकी अपनी चेतना बन जाती है, फिर यह परिवार की चेतना विकसित होकर राष्ट्र की चेतना से एक रुप हो जाती है और उसके विकास के बाद मानवता की चेतना आती है। हमारे धर्म की अपेक्षा तो यह है कि इससे आगे विकास होना चाहिये, फिर सम्पूर्ण चराचर के साथ एकात्मता आती है जिसमें कहा गया है कि "स्वदेशो भुवनत्रयम" He becomes universal citizen, हमारी चेतना के विकास के ये विभिन्न स्तर है। इसलिये स्वदेशी का मतलब तंग नजरिया या दकियानूसीपन नहीं है। सभी देशों को स्वदेशी की भावना अपनानी चाहिये। स्वदेशी की भावना से युक्त सभी देश सम्पूर्ण विश्व की प्रगति के लिये समानता के आधार पर एक दूसरे के साथ सहयोग करें, यही वास्तव में स्वदेशी का अर्थ है। इस दृष्टि से स्वदेशी जागरण मंच काम कर रहा है।

भारतीय किसान संघ के हम बहुत आभारी है कि उन्होने खासकर किसानों में जागृति लाने के लिये इस प्रश्न को उठाया। आमगाँव से खामगाँव तक किसान दिंडी का आयोजन किया। मुझे यह विश्वास है कि यह जो नवचेतना का आज भले ही सूक्ष्म स्वरुप दिखाई देता होगा तो भी जिनके बहुत लम्बे हाथ हैं, ऐसे विदेशी पूंजी को ठुकराकर भी स्वदेशी का यह संदेश गांव-गांव तक पहुंचेगा, शहर-शहर में फैलेगा और अन्त में स्वदेशी की विजय होगी, विदेशी की पराजय होगी।

इस समय स्वदेशी जागरण मंच ने आप से चार प्रार्थनाएं की है। एक प्रार्थना है कि हममें से हरेक ने एक पोस्टकार्ड अपने प्रधानमंत्री के नाम डालकर मांग करनी चाहिये कि डंकेल पर हस्ताक्षर मत करो। दूसरी प्रार्थना है स्वदेशी का पुरस्कार करना चाहिये,

तीसरी प्रार्थना विदेशी के बहिष्कार की है और चौथी प्रार्थना यह कि इन सभी बातों को केन्द्रित करने के लिये, pinpoint करने के लिये स्वदेशी जागरण मंच आपसे प्रार्थना करता है कि इन तीन विदेशी वस्तुओं, कोलगेट, पेप्सी और कोकाकोला का बहिष्कार करें। ये चार कार्यक्रम स्वदेशी जागरण मंच ने आपके सामने रखे हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि आज सभी नागरिक, जो देशभक्त हैं, आज स्वदेशी की बात इसलिये नहीं समझ रहे हैं क्योंकि उनको गुमराह किया जा रहा है। वे स्वदेशी की बात को समझेंगे, उनका भ्रम निवारण होगा और स्वदेशी की भावना Spirit लेकर जैसे १९४७ के पहले हुआ था, वैसे अपना यह देश फिर से एक होकर खड़ा हो जायेगा। इस आशा के साथ मैं अपना भाषण यहीं समाप्त करता हूँ।

****

प्रकाशकीय निवेदन

डंकेल प्रस्तावों के खतरों से देश के किसानों को अवगत कराने तथा उसके विरोध में जनमत जागृत करने के उद्देश्य से विगत ११ नवम्बर से ६ दिसम्बर १९९३ तक **भारतीय किसान संघ और स्वदेशी जागरण मंच ने विदर्भ के आमगांव से खामगांव तक किसान दिंडी** का आयोजन किया था। यह दिंडी जब नागपुर पहुंची तो दि. २७ नवम्बर को नागपुर के चिटणीस पार्क में एक विशाल जनसभा का आयोजन किया गया। इस सभा को देश के महान विचारक, विख्यात श्रमिक नेता और भारतीय किसान संघ के संस्थापक माननीय श्री दत्तोपंतजी ठेंगडी ने संबोधित किया। उनका पूरा भाषण ही संपादित रूप में इस पुस्तिका में प्रस्तुत है।

- प्रकाशक